P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-2* ISSUE-10* January- 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 Remarking An Analisation

प्राचीन वैदिक ग्रंथों में पर्यावरणीय चेतना

प्रज्ञा मिश्रा
असिस्टेंट प्रोफेसर,
इतिहास विभाग,
दीनदयाल उपाध्याय राज0
महाविद्यालय,
सैदाबाद, इलाहाबाद

सारांश

यह सर्वविदित है कि मनुष्य प्रकृति का हिस्सा है, उसके जन्म और अस्तित्व का प्रकृति से गहरा सम्बन्ध है। किंतु मनुष्य दूसरे प्राणियों से अपनी बैद्धिक क्षमता और जैविक वैशिष्ट्य के कारण भिन्न और बेहतर भी है। विश्व के समक्ष पर्यावरण सुरक्षा दिन–प्रतिदिन विकराल रूप धारण करती जा रही है। वैदिक काल में किसी ऋषि ने कहा है– **''माताभूतिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः**[1] अर्थात् धरती मेरी माँ है और मैं उसका बेटा हूँ।

वेदों, पुराणों, महाभारत आदि ग्रंथों के रचयिताओं ने मनुष्य को प्रकृति के संरक्षण के लिए सदैव प्रेरित करता रहा है। साहित्य, समाज, और संस्कृति का अभिन्न सम्बन्ध है। समाज पर्यावरण के साथ अनुक्रिया करके अपने अस्तित्व को कायम रखता है। साहित्य के लिए समाज और समाज के लिए पर्यावरण महत्वपूर्ण है। प्राचीन साहित्य स्वान्तः सुखाय लिखे गये। भारतीय प्रज्ञा की प्रथम उन्मेष वेद ही है। वेद की समस्त ऋचाएं प्रकृति एवं पर्यावरण का प्रतिबिम्ब है। संस्कृत साहित्य में वैदिक काल से ही पर्यावरण के प्रति विलक्षण चेतना दिखाई देती है। ऋग्वेद से प्रारम्भ होकर आधुनिक काल के साहित्य तक पर्यावरण के प्रति रगात्मक एवं सौन्दर्य बोध का वर्णन यत्र–तत्र दिखाई देता है। वेदों के तत्वदर्शी महार्षियों के द्वारा वायु, जल आदि के शुद्धता के लिए प्रार्थना की गयी है। शुद्ध जल और वायु से प्राणी चिरजीवी होते हैं। अथर्ववेद में कहा गया है–

जनं विभृति बहुधा–विवाचसं नाना धर्माणं पृथ्वी यथौकसम्[2] अर्थात् वन में वृक्षारोपण करो।

यजुर्वेद में कहा गया है–

अयं हि त्वा स्वाधितिस्तेतिजानः प्राणिनाथ महते सौभागाय।
अतस्त्वं देव वनस्पते शतवल्शो विरोह, सहस्त्रवल्शावि वयं रूहेम।।[3]

यजुर्वेद का गायत्री मंत्र सूर्य देव को समर्पित है। वेदों में प्रदूषित जल की शुद्धि के उपाय भी वर्णित है–

'सवितुर्वः प्रसव उत्पनाभ्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः[4] इसी प्रकार आरोग्यप्रद आयुर्वेद में पर्यावरण का विशद वर्णन है। महर्षि सुश्रुत और चरक के द्वारा कहा गया है कि पर्यावरण के विध्वंस का कारण अधर्म और पूर्वजन्म के असत् कर्मो का फल है।

मुख्य शब्द : प्रकृति, पर्यावरण, वेद, पुराण, उपनिषद, पृथ्वी, साहित्य, अग्नि

प्रस्तावना

भारतीय, शास्त्रों में प्रकृति को आरम्भ से ही मानव के सहयोगी के रूप में देखा गया है। यजुर्वेद के शान्ति मंत्र में पृथ्वी और अंतरिक्ष के साथ ही वनस्पति, जलवायु औषधि सभी के शान्ति की प्रार्थना की गयी है।

शुक्ल यजुर्वेद के प्रारम्भ में ही यह प्रार्थना की गयी है कि **हे सभी के प्रेरक परमेश्वर। हमारी इन्द्रियों को सर्वश्रेष्ठ कर्म यज्ञ के लिए हमें प्रेरित करो जिससे कि इष् और ऊर्ज् की प्राप्ति के लिए हम क्रियाशील रहें।**[5] मनुष्य जिस उत्तम सुख की कामना करता है, वह इष् है। जिनसे मनुष्य दैहिक और आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त करता है, वह ऊर्ज् है। इस ऊर्जा का स्रोत परमेश्वर है, जो संसार के कण–कण में विद्यमान है। हमारे सभी कार्य इष् और ऊर्ज् की प्राप्ति के लिए संचालित होते हैं, जो यज्ञ के परम लक्ष्य हैं। इसलिए यज्ञ को पर्यावरण का परम शोधक माना जाता है। यज्ञ में आहुतियों को ही नहीं अर्पित किया जाता है अपितु यह एक मात्र भावना है जो समस्त पर्यावरण को सुवासित करती है। यज्ञ में हिंसा को निषेध करने के लिए यज्ञ को अहवर (हिंसा विहीन) और गाय को अध्निया (न मारने योग्य) कहा गया है। अकारण स्वार्थ वशात् हिंसा होने पर वातावरण प्रदूषित हो जाता है।

यज्ञ, वसुओं को पवित्र करने वाला है।[6] वसु का अर्थ है– निवास योग्य। अर्थात **यज्ञ से पृथिवी भी पवित्र होती हैं यह यज्ञ वायु का भी शोधन करता है।**[7] इस प्रकार पर्यावरण भी शुद्ध होता है। यज्ञ में वेद वाणी का उच्चारण होता है, जो ध्वनि प्रदूषण को दूर करती है, यह पर्यावरण की शुद्धता में सहायक होता है।

वाजसनेयि संहिता में पर्यावरण की शुद्धता के लिए यज्ञ की उपयोगिता को बताया गया है। **यज्ञ से हानिकारक कीटाणु सन्तप्त होकर नष्ट हो जाते है।**[8] यज्ञ व्यापक होकर वायु के लिए शोधक होता है।

वायु और अग्नि दोनों मिलकर पवित्र करने वाले है। वायु ही नहीं, जल की भी शुद्धि का वहाँ संकेत प्राप्त होता है। **यज्ञ अग्नि[10] के संयोग से विस्तृत होकर ही समस्त वायु मण्डल को शुद्ध करता है।[11] वाजसनेयि संहिता में यज्ञ को ही धान्य कहा गया है।[12] यज्ञ स्वच्छता का प्रतीक है। शतपथ ब्राह्मण में भी कहा गया है कि सभी चेतन प्राणियों का पालन–पोषण यज्ञ द्वारा ही सम्पादित होता है– यशों हि सर्वाणि भूतानि भूनाक्ति।**[13]

वस्तुतः प्राणिमात्र का अस्तित्व तथा उसका विकास, उसके पर्यावरण पर ही निर्भर करता है। पृथ्वी, जल, आकाश, वायु तथा अग्नि सभी मिलकर प्रकृति का निर्माण करते है तथा इन्हीं पंचतत्वों से मानव शरीर भी निर्मित होता है। वेदों में मानव शरीर के साथ ही प्रकृति के प्रत्येक घटक की स्तुति की गयी हैं। प्रकृति के संरक्षण तथा संवर्धन की भी कामना की गयी है।

अध्ययन का उद्देश्य

गेरालडो रिवेरा का कथन प्रकृति माँ इस साल भले माफ कर दे, या अगले साल भी पर अंत में वो आएंगी और आपको सजा देंगी और आपको तैयार रहना होगा।

इतिहास की शिक्षिका होने के नाते वेदों में जो पर्यावरण संरक्षण पर बात की गयी है उसमें निहित अर्थ को समझने और समझाने के लिये यह अध्ययन किया गया है इसमें जॉ बर्रोज़ का कथन लिखना समीचीन होगा कि ''प्रकृति उपदेश देने से अधिक सिखाती है। शिलाओं पर धर्मोपदेश नहीं लिखे होते। पत्थरों से नैतिकता की बातें निकालने से आसान है चिंगारी निकालना।''

वेद, पुराण, उपनिषद आदि ग्रंथों में पर्यावरण से सम्बन्धित विषद वर्णन मिलता है। चिरकाल तक सूर्य–दर्शन के निमित, निरोग रहने के लिए शरीर रक्षक औषधि को मेरे देह में स्थित करों। मुझ में स्थित पाप को बहा दो। अग्नि का आह्मवान करते हुए कह गया है कि मुझे तेजस्वी करो। प्रजा और वायु से युक्त करो। देवगण, ऋषिगण और इन्द्रदेव मेरे स्तवन को जान लें।

जल की महत्ता का वर्णन करते हुए कहा गया है कि हे जलों। मेघ के ताड़ित करने पर इधर–उधर चलकर नाद करने के कारण तुम्हारा नाम नदी हुआ है। और तुम्हारे अप, उदक नाम भी अर्थ के अनुकूल ही है। वरूण द्वारा प्रेरित होने पर तुम नृत्य करने से एकत्र करने लगे थे इस समय तुम्हें मिले तभी से इसका नाम अप हुआ। इच्छा न रहते हुए इन्द्र ने तुम्हें अपनी शक्ति से वरण किया इसलिए इसका नाम वारि हुआ। गाय के बारे में कहा गया है कि **हे गौओं! तुम्हें हम सुखपूर्ण गोष्ठों से युक्त करते हुए, चारा आदि से सम्पन्न करते है।[15] हम तुम्हें समृद्धि, पुत्र–पौत्र आदि से भी सम्पन्न करते है।**[16] हे गौओ। अर्यमा, पूषा, इन्द्र, बृहस्पति तुम्हें उत्पन्न करें, फिर तुम अपने क्षीर, घृत आदि के द्वारा मुझ साधक को तुष्ट करो। वृष के बारे में सूक्त 17 पृष्ठ 106 में बताया गया है कि हलों को जोतने वाले जानकार व्यक्ति देवात्मक हवि रूप अन्न की प्राप्ति के निर्मित वृषभों के कन्धों पर जुओं को रखते है। हे कृषकों। हल को जुओं में जोड़कर जुओं को वृषभ स्कंध पर स्थापित करों। इस जुटे हुए खेत में ब्रीदि यत्रादि बो दो। यवादि रूप अन्न शीघ्र ही हमारे यहां उत्पन्न हो। फिर वह पक कर शीघ्र दराती स्पर्श करने योग्य हो। कृषि योग्य खेत को लोहे का शल्य वाला हल सुख देता है यह धन्यादि का उत्पत्तिकारक होने से सोमयाग का कर्ता है। इसका अवयव भूमि में रहता हुआ गति करता है। यह हल गवादि पशुओं की समृद्धि का कारण बने। खेत की रेखा को इन्द्र ग्रहण करें, पूषा उनकी रक्षा करने वाले हो, यह रेखा इच्छित फल से सम्पन्न होकर प्रति वर्ष सुख देने वाली हो। सुन्दर शल्य भूमि खोदते हुए बैलों के पीछे चले। इसी तरह अथर्ववेद के पृष्ठ 108 में सूक्त 18 में वर्णित किया गया है जो औषधि सौत को बाधा डालने वाली है और जो औषधि स्त्री को पति प्राप्त कराने वाली हो उस परम शक्तिशाली पाठा नामक औषधि को मैं खोद कर लाती हूँ। तक्षक सर्प के बारे में अथर्ववेद के पृष्ठ 136 से सूक्त 6 में कह गया है इन्होने क्षत्रियों में प्रथम होने के कारण आकाशस्थ सोम का पान किया। वे सोम पीने वाले ब्राह्मण कन्दमूल, फल से उत्पन्न इस विष को निष्प्रभाव करें। आकाश पृथिवी जितने परिमाण में निहित है पृष्ठ 137 के सूक्त 7 में वरण नामक वृक्ष उत्पन्न करने वाली वरणावति का जल हमारे विष को दूर हटावे। इसके जल में घु लोक में स्थित अमृत का स्वरूप विद्यमान है। उस अमृतमय जल के द्वारा कन्दादि से उत्पन्न तेरे विष को हटाता हूँ। पूर्व दिशा का विष निर्वीय हो जाय। सूक्त 15 पृष्ठ 153 में कहा गया है हे सूर्य। तुम प्रजा पालक हो, समुद्र से वृष्टि रूप जलों को प्रेरित करे। वे अश्व समान वेग वाले, व्यापनशील, वीर्य–वृद्धि को प्राप्त हो। वरूण के बारे में सूक्त 16 पृष्ठ 154 में कहा गया है।

भूमिका

प्राचीन काल से ही ऋषि–मुनियों तथा महापुरूषों ने पर्यावरणीय चेतना को जन–जीवन से जोड़ने की कोशिश की है। भारतीय शास्त्रों ने प्रकृति को सहयोगी या सहचरी के रूप में देखा है। इसलिए यजुर्वेद के शांति मंत्र में पृथ्वी एवं अंतरिक्ष के साथ ही वनस्पति, जल वायु, औषधि सभी के शांति की प्रार्थना की गयी है–

(ऊँ धौः शान्तिरन्तरिखर ऊँ शान्ति, पृथिवी शान्तिरापः, शान्तिरोषधायः शान्तिः।

वनस्पतयः शान्तिर्विरवेदेवाः शार्न्तिह्रम शान्तिः, सर्व ऊँ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः।। सर्वरिष्ट सुशान्तिर्भवतु।[17])

हमारे पूर्वजों को यह पता था कि कृति के शान्ति एवं मनुष्य के साथ उसके सहअस्तित्व के बिना पर्यावरण संरक्षण और जीवन की सत्ता की कल्पना नहीं की जा सकती। ऋग्वेद में ऋषि कहते है–

शं ना धावा पृथ्वी पूर्व दूतौ
शमन्तरिक्षं दृश्ये नौ अस्तुः।
शं न औषधिर्व निनो भवन्तु
शं नो रजसस्पतिरस्तुविष्णुः।।[18]

अर्थात् हे ईश्वर। जब हम प्रातः काल नेत्र खोले तो यह पृथ्वी अर्थात् यह लोक हमें मंगलकारी मिले और हम सब अन्तरिक्ष की ओर अपने नेत्रों से देखे तो वह भी हमारे लिए कल्याणकारी हो। हे जगत्ति। आप हम पर अपनी ऐसी कृपा बनाए कि हम शुभ कार्य करें और हमारे चतुर्दिक सुख की वर्षा होती रहे।

पर्यावरणीय एवं प्राणी एक दूसरे पर निर्भर हैं। प्रकृति अर्थात पर्यावरण ही साहित्य को जीवंतता प्रदान करती है। आदि काल से ही हमारे ऋषि, मुनि, कवि इस तथ्य से परिचित थे, इसलिए भारतीय संस्कृति में आर्य आरंभ से ही देव पूजक न होकर प्रकृति उपासक थे, ऋग्वेद के अनेक सूक्तों एवं मंत्रों में ऋषियों ने पर्यावरण निर्माण में पंचतत्वों आकाश, वायु, पृथ्वी, जल एवं अग्नि को ही प्रमुख माना है तथा शेष समस्त तत्वों की उत्पत्ति इन्हीं से मानी गयी है।

सकृद्ध धौरजायत सकृत भूमिरजायत।
पृश्न्या दुग्धं सकृत्पयस्तदन्यो नानु जायतेः।।[19]

प्राचीन भारतीय वाग्ङमय एवं अरण्यक संस्कृति के प्रति आदर का भाव निहित था। वृक्षों, वनस्पतियों, नदियों, जलाशय, आकाश, अग्नि, वायु एवं अन्तरिक्ष आदि में देवच्व की प्रतिष्ठा की गयी है। प्रकृति के प्रति पूज्य भाव के कारण उनका निर्मम दोहन प्रायः निविद्ध था। यही करण पीपल के वृक्ष को देवताओं का घर कहा गया है।

अश्वत्थो देव सदनः[20]

वाराह पुराण में वृक्ष दान को विशिष्ट दान माना गया है। क्योंकि संसार में भूमिदान और गोदान से भी ज्यादा पुण्यफल वृक्षदान से प्राप्त होता है।

भूमि दानेन ये लोका गोदानेन च कीर्तिताः।
ते लोकाः प्राज्यनित पुंमि पादपानाः प्ररोहणे।।[21]
(वाराण पुराण 170/39)

पद्मपुराण में पुलस्त्य ऋषि भीष्म से वृक्षारोपण का महत्व बतलाते हुए कहते है[22] – वृक्ष पुत्रहीन को पुत्रवान होने का फल देते है इतना ही नहीं, वे अधिदेवता रूप से तीर्थो में जाकर वृक्ष लगाने वाले को पिण्ड भी देते है। अतः भीष्म। तुम यत्नपूर्वक पीपल के वृक्ष लगाओं। पीपल का वृक्ष लगाने से मनुष्य धनी एवं नीरोग होता है पलाश ब्रह्मतेज प्रदान करने वाला है। अशोक शोक का नाश करता है। पाकड़ यज्ञ का फल देने वाला बताया गया है। नीम का वृक्ष आयु प्रदान करने वाला है। जामुन कन्यारत्न देने वाला कहा गया हैं। अनार की वृक्ष पत्नी प्रदान करने वाला बताया गया है। रवैर का वृक्ष लगाने से अरोग्य की प्राप्ति होती है। बेल के वृक्ष में शिव तथा गुलाब में देवी पार्वती का निवास है। अशोक वृक्ष में अप्सराएं और मोगरे के वृक्ष में गन्धर्व वास करते है। बेंत का वृक्ष लुटेरों को भयाक्रान्त करने वाला है। चन्दन और कटहल के वृक्ष कमशः पुण्य और लक्ष्मी देने वाले है। चम्पावृक्ष सौभाग्य प्रदान करने वाला है। तथा मौलसिरी से कुल की वृद्धि होती है। नारियल लगाने वाला अनेक स्त्रियों का पति होता है। दाख का वृक्ष सुन्दर स्त्री प्रदान करता है। इसी प्रकार अनान्य वृक्ष यथोयोग्य फल प्रदान करते हैं।

पद्मपुराण में कहा गया है कि हे वनस्पते। आप मुझे आयु, बल, यश, तेज, संसति, पशु, धन, बह्मज्ञान और स्मरण शक्ति प्रदान करें।

आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजा पशुवसूनि च।
ब्रह्मप्रज्ञां च मेधां च त्वं नो देहि वनस्पते।।[24]

पौराणिक ग्रंथों में तुलसी, नीम, आंवला, गूगल, पृश्निपर्णी (पिटवन), शतावर आदि वृक्षों फलों के औषधियों गुणों की चर्चा की गयी है।

वेदों में कही भी ''पर्यावरण '' शब्द का उल्लेख नहीं है, किन्तु उसके समस्त घटक तत्वों का पृथकतः अथवा सम्मिलित उल्लेख एवं स्तुति पर्यावरण दृष्टि को पुष्ट करती है। वैदिक ऋषियों द्वारा की गयी स्तुतियां यह संकेत करती हैं कि वृक्ष वनस्पतियां, जीव इत्यादि सभी प्राणवान है, और इन सभी का संरक्षण ही मानव का कर्तव्य है। यजुर्वेद में पृथ्वी, जल, वायु , इत्यादि को दूषित होने से बचाने व शुद्ध रखने की प्रार्थनाएं भी मिलती है। पुराणों में कहा गया है कि वृक्षों के रूदन करने पर व्याधियां फैलती है।

''रोदने व्याधिभभ्येति''

अर्थववेद में पृथ्वी के अत्यधिक दोहन नहीं करने पर बल दिया गया है। तथा यह कहा गया है कि पृथ्वी के जितने भाग को खोदा जाए उसे तुरन्त भर देना चाहिए।

निष्कर्ष

प्रकृति में स्वयं शोधन की प्रवृति है जिसके तहत वह अपना तथा अपने मूलभूत संगणक तत्वों का परिशोधन करती रहती है। इसीलिए विकास ऐसा होना चाहिए कि हम प्राकृतिक संसाधनों को दोहन करें तो उनका संरक्षण भी करें। हमारे हिन्दू धर्म ग्रंथों में तो सृष्टि की कल्पना भी समत्व पर आधारित मानी जाती है। वस्तुतः पर्यावरण ही मानव जीवन का मूल आधार है और इसके लिए आवश्यक है कि मानव समाष्टि कल्याण की भावना के साथ पर्यावरण से मित्रवत व्यवहार करें। मनुष्य को यह समझना चाहिए कि प्रकृति अपने हित के लिए अपने संसाधनों का प्रयोग कभी नहीं करती। वह तो स्वयं मानवों के लिए असीमित संसाधन उपलब्ध कराती है। मनोभावों के अनुसार भावनाओं को अभिव्यक्त करती है। ऐसी स्थिति में मानव को प्रकृति के साथ कृतज्ञता का भाव रखकर उसके संरक्षण का ध्यान रखना चाहिए।

हमारी संस्कृति में काम तथा अर्थ पर धर्म के अंकुश की बात कही गयी है अर्थात उपभोग तथा धनार्जन इस प्रकार होना चाहिए कि समाज तथा प्रकृति

पर दीर्घकालीन दुष्प्रभाव न पड़े। मनुष्य तथा प्रकृति में सामन्जस्य आवश्यक है। उपभोग आवश्यक है, किन्तु अन्तिम लक्ष्य नहीं है मानव को प्रकृति को वश में करने के स्थान पर स्वयं पर नियंत्रण लगाना अति आवश्यक है।

संन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *अथर्ववेद काण्ड 12– पृथ्वी सूक्त*
2. *ऋग्वेद 10/101/11*
3. *यजुर्वेद 5/43*
4. *यजुर्वेद 1/12/13*
5. *शु0 य0 सं. 1.1*
6. *वसोः पवित्रमसि (वा0 सं0 1.8)*
7. *मातरिश्वनों धर्मोअसि (श0 ब्रा0 1.2)*
8. *वा0 सं0 1.20*
9. *पवित्रेस्थो वैष्णव्यो (वा0 सं0 1.12)*
10. *यथा ता आपः शुद्धा भवेयुरेतदर्थमहं यज्ञानुष्ठाता अग्नेय जुष्टं तं यज्ञं प्रोक्षताम (दयानन्द)*
11. *अग्ने स्तनू एसि (वा0 सं0 1.15)*
12. *वा0 सं0 1.20*
13. *शतपथ ब्राह्मण 9/8/1*
14. *ऋग्वेद सूक्त 23 21/22 (खण्ड1)*
15. *अथर्ववेद सूक्त 13 पृष्ठ 101*
16. *अथर्ववेद सूक्त 14 पृष्ठ 102*
17. *शुक्ल यजुर्वेद 36/16*
18. *ऋग्वेद 7/35/5*
19. *ऋग्वेद 6/48/22*
20. *अथर्ववेद 5/4/3*
21. *बाराह पुराण 170/39*
22. *वेद व्यास, पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड अध्याय 42*
23. *वेद व्यास, पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड अध्याय 21*
24. *वेद व्यास, पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड अध्याय 94,श्लोक 11*
25. *वेद व्यास, पद्मपुराण, सृष्टिखण्ड अध्याय 233, श्लोकार्ध*